Impact Factor (SJIF): 6.092 E-ISSN: 2583-1615

International Journal of Research in Academic World

Received: 14/April/2023 IJRAW: 2023; 2(5):198-201 Accepted: 23/May/2023

डॉ. सम्पूर्णानन्द के विचारानुसार भाषा का माध्यम

*[1]डॉ. नवनीत कुमार सिंह

*[1]विभागाध्यक्ष (बी.एड.), शिक्षा विभाग, चन्द्रावती तिवारी कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, काशीपुर, उधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड, भारत।

सारांश

डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने भाषा के क्षेत्र में सराहनीय कार्य किये। उन्होंने अनेक उच्च पदों पर रहकर, समाज व शिक्षा के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन्दौर में सन् 1917 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के आठवें अधिवेशन का आयोजन था, जिसका सभापतित्व गाँधी जी ने किया। इस सम्मेलन में वह हिन्दी के प्रबल समर्थक पुरूषोत्तम दास टण्डन के निकट सम्पर्क में आये तथा ''हिन्दी के आन्दोलन तथा पत्रकारिता से निकट सम्बद्ध हो गये। लगभग तीन वर्ष तक वह इन्दौर में कॉलेज की सेवा में रहे और हिन्दी–प्रेम तथा राष्ट्रीयता की भावना का स्फूरण इसी काल में उनके हृदय में हुआ।'' काशी विद्यापीठ में उनको मर्यादा नामक प्रसिद्ध पत्रिका का सम्पादक बनाया गया। ''यद्यपि यह राजनीति–प्रधान पत्रिका थी किन्तु साहित्य तथा अन्य विषयों पर भी शीर्षस्थ विद्वानों के लेख इसमें प्रकाशित होते थे।'' स्वतन्त्रता के बाद उत्तर प्रदेश में राजभाषा व माध्यम के प्रश्न पर गम्भीर विवाद प्रारम्भ हो गया। तात्कालिक प्रधानमंत्री पं0 नेहरू हिन्दुस्तानी भाषा के समर्थक थे, जबकि केन्द्रीय शिक्षामंत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद उर्दू को सरंक्षण देना चाहते थे। तात्कालिक प्रान्तीय शिक्षामंत्री डॉ0 सम्पूर्णानन्द 'हिन्दी' के प्रति पूर्णतः समर्पित थे। उन्होंने इन दोनों के विरोध के बावजूद उ0प्र0 की राजभाषा हिन्दी घोषित की।

सन् 1948 ई0 में लखनऊ में 'हिन्दुस्तानी सम्मेलन' हुआ। सम्मेलन में आलोचकों को जवाब देते हुए डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने कहाः ''भाषा की समस्या बड़ी दुरूह समस्या है। आज कल उर्दू के पक्षपाती हिन्दुस्तानी की आड़ में खड़े हो गये हैं, जो कोई भी इनके भाषणों और लेखों को पढ़ता होगा वह मानेगा कि हिन्दुस्तानी उर्दू का छद्म रूप है।'' पं0 जवाहरलाल नेहरू के कथन, कि भाषा के सम्बन्ध में अल्पसंख्यकों को दबाना उचित नहीं, उनको उद्धत करते हुए डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने कहा कि ''हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानने में अल्पसंख्यकों को दबाने का प्रश्न ही नहीं उठता।'' हाँ ''हिन्दी को अस्वीकार करना बहुसंख्यकों को दबाने के समान है।''

डॉ0 सम्पूर्णानन्द के विचार में हिन्दी हमारी ही संस्कृति, भावनाओं, आकांक्षाओं एवं आदर्शों का प्रतीक है, ''उसी के द्वारा हमारे उज्जवल अतीत् और उज्जवलतर अनागत के समन्वय की यथार्थ अभिव्यक्ति हो सकती है।'' उन्होंने स्पष्ट कहा कि हिन्दी को मात्र साधारण व्यवहार काव्य और दर्शन के लिए ही प्रयोग नहीं करना है वरन् उसको विज्ञान, अर्थशास्त्र, गणित जैसे शास्त्रों के अध्ययन अध्यापन का भी माध्यम बनना है। डॉ0 सम्पूर्णानन्द जैसे समर्थकों के कारण ही हिन्दी भाषा का आस्तित्व बचा हुआ है, वरना विदेशी भाषा कब का इसे कुचलकर आगे निकल गयी होती।

मुख्य शब्दः डॉ0 सम्पूर्णानन्द, भाषा, माध्यम।

प्रस्तावना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहने के नाते उसे आपस में सर्वदा ही विचार–विनिमय करना पड़ता है। कभी वह शब्दों या वाक्यों द्वारा अपने आपको प्रकट करता है तो कभी सिर हिलाने से उसका काम चल जाता है। रेलवे गार्ड और रेल–चालक का विचार–विनिमय झंडियों तथा वाकी–टाकी से होता है, चोर अँधेरे में एक–दूसरे का हाथ छूकर या दबाकर अपने आपको प्रकट कर लिया करते हैं। इसी तरह हाथ से संकेत, करतल–ध्वनि, आँख टेढ़ी करना, मारना या दबाना, खाँसना, मुँह बिचकाना तथा गहरी साँस लेना आदि अनेक प्रकार के साधनों से हमारे विचार–विनिमय का काम चलता है। ऐसे ही यदि पहले से निश्चित कर लिया जाय तो स्वाद या गंध द्वारा भी अपनी बात कही जा

*Corresponding Author: डॉ. नवनीत कुमार सिंह

सकती है। उदाहरण के लिए, 'यदि मैं कॉफी पिलाऊँ तो समझ जाना कि मेरे पास समय है, तुम्हारा काम करूँगा, किन्तु यदि चाय पिलाऊँ तो समझ जाना कि समय नहीं है, काम नहीं करूँगा,' या 'यदि गुलाब की अगरबत्ती जलती मिले तो समझना कि तुम्हारा काम हो गया है, किन्तु यदि चंदन की अगरबत्ती जलती मिले तो समझ जाना कि काम नहीं हुआ है।' आशय यह है कि गंध–इंद्रिय, स्वाद–इंद्रिय, स्पर्श–इंद्रिय, दृग–इंद्रिय तथा कर्ण–इंद्रिय–इन पाँचों ज्ञान–इंद्रियों में किसी के भी माध्यम से अपनी बात कही जा सकती है। इनमें पहली तथा दूसरी का प्रयोग प्रायः नहीं होता; हाँ, किया जा सकता है, स्पर्श–इंद्रिय का भी प्रयोग कम ही होता है। इनमें अधिक प्रयोग आँख का होता है, जैसे रेल का सिगनल, गार्ड की हरी या लाल झंडी, सिर हिलाकर 'हाँ' या 'नहीं' करना, आदि। किन्तु इन सभी में सबसे अधिक प्रयोग कर्ण–इंद्रिय का होता है अपनी सामान्य बातचीत में हम इसी का प्रयोग करते हैं। वक्ता बोलता है और श्रोता सुनकर विचार या भाव को ग्रहण करता है। भाषा को व्यापकतम रूप में परिभाषित करें तो 'भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से हम सोचते हैं तथा अपने विचारों को व्यक्त करते हैं।' अतः भाषा उसे कहते हैं जो बोली और सुनी जाती है और बोलना भी पशु–पक्षियों का नहीं, गूँगे मनुष्यों का भी नहीं, केवल बोल सकने वाले मनुष्यों का। प्लेटो ने 'साफिस्ट' में विचार और भाषा के सम्बन्ध में लिखते हुए कहा है कि विचार और भाषा में थोड़ा ही अन्तर है। "विचार आत्मा की मूक या अध्वन्यात्मक बातचीत है, पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।" वेन्द्रिए कहते हैं, "भाषा एक तरह का संकेत है। संकेत से आशय उन प्रतीकों से है जिनके द्वारा मानव अपने विचार दूसरों पर प्रकट करता है। ये प्रतीक कई प्रकार के होते हैं, जैसे नेत्रग्राह्य, कर्णग्राह्य, और स्पर्शग्राह्य। वस्तुतः भाषा की दृष्टि से कर्णग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ है।" [1]

भाषा के माध्यम पर डॉ0 सम्पूर्णानन्द के विचारः डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने भाषा के क्षेत्र में सराहनीय कार्य किये। उन्होंने शिक्षक, शिक्षामन्त्री व मुख्यमन्त्री आदि उच्च पदों पर रहकर, समाज व शिक्षा के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान दिया। जगदीश चन्द्र दीक्षित ने लिखा है कि इन्दौर में डॉ0 सम्पूर्णानन्द जी के अध्यापन काल की सर्वप्रमुख घटना सन् 1917 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के आठवें अधिवेशन का आयोजन था, जिसका सभापतित्व गाँधी जी ने किया। इस सम्मेलन में वह हिन्दी के प्रबल समर्थक पुरूषोत्तम दास टण्डन के निकट सम्पर्क में आये तथा ''हिन्दी के आन्दोलन तथा पत्रकारिता से निकट सम्बद्ध हो गये। लगभग तीन वर्ष तक वह इन्दौर में कॉलेज की सेवा में रहे और हिन्दी–प्रेम तथा राष्ट्रीयता की भावना का स्फूरण इसी काल में उनके हृदय में हुआ।'' काशी विद्यापीठ में उनको मर्यादा नामक प्रसिद्ध पत्रिका का सम्पादक बनाया गया। ''यद्यपि यह राजनीति–प्रधान पत्रिका थी किन्तु साहित्य तथा अन्य विषयों पर भी शीर्षस्थ विद्वानों के लेख इसमें प्रकाशित होते थे।''[2] संयुक्त प्रान्त के शिक्षामंत्री के रूप में माध्यमिक शिक्षा सम्मेलन में डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने कहाः ''हमारी शिक्षा का माध्यम विदेशी भाषा होने का परिणाम यह हुआ कि साधारण बालक–बालिकाओं की बुद्धि कुंठित हो गई और उन्हें ऐसी बौद्धिक कलाबाजी लगाने के लिए विवश होना पड़ता है जिसका आनुपातिक परिणाम नहीं निकलता।''[3]

हिन्दुस्तानी का विरोध तथा हिन्दी का समर्थनः स्वतन्त्रता प्राप्त करने के उपरान्त उत्तर प्रदेश में राजभाषा व माध्यम के प्रश्न पर गम्भीर विवाद प्रारम्भ हो गया। तात्कालिक प्रधानमंत्री पं0 जवाहरलाल नेहरू हिन्दुस्तानी भाषा के समर्थक थे, जबकि केन्द्रीय शिक्षामंत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद उर्दू को सरंक्षण देना चाहते थे। तात्कालिक प्रान्तीय शिक्षामंत्री डॉ0 सम्पूर्णानन्द 'हिन्दी' के प्रति पूर्णतः समर्पित थे। उन्होंने इन दोनों के विरोध के बावजूद उ0प्र0 की राजभाषा हिन्दी घोषित की। सन् 1948 ई0 में लखनऊ में 'हिन्दुस्तानी सम्मेलन' हुआ। सम्मेलन में आलोचकों को जवाब देते हुए डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने कहाः ''भाषा की समस्या बड़ी दुरूह समस्या है। आज कल उर्दू के पक्षपाती हिन्दुस्तानी की आड़ में खड़े हो गये हैं, जो कोई भी इनके भाषणों और लेखों को पढ़ता होगा वह मानेगा कि हिन्दुस्तानी उर्दू का छद्म रूप है।'' आरोपों के सम्बन्ध में उन्होंने कहाः ''उन्मत्त प्रलाप कभी किसी समस्या का समाधान नहीं कर सकता। भावनाओं की दुहाई देना तर्क नहीं कहा जा सकता और अपने विपक्षी के उद्देश्यों में सन्देह करना वितंडा के स्तर से भी नीचे उतरना होता है। गाँधी जी के आदेशों और मतों का हमारे हृदयों में उच्चतम स्थान है यद्यपि जीवनकाल में उन्हें पागल समझने वालों को अब उनके मतों की दुहाई देते देखकर उन्हें ढोंगी कहने से हम अपने को रोक नहीं सकते। यह सोचने की बात है कि जब हम अपने संविधान, शासन, रक्षा और जीवन की विकट आर्थिक समस्याओं को अपनी बुद्धि के अनुसार हल कर रहे हैं तो फिर हम इस बुद्धि से ही भाषा की समस्या भी हल करने का प्रयत्न क्यों न करें? अपने विपक्षियों को साम्प्रदायिक कह देना उर्दू के पक्षपातियों का ब्रह्मास्त्र है। हिन्दी–भाषी द्वारा भारतीय संस्कृति के प्रति किसी भी प्रकार की अभिव्यक्ति इस्लाम के कट्टर विरोधी की द्योतिका हो जाती है। वह लोग अनुत्तरदायित्व की किस सीमा तक जा सकते हैं इसका परिचय हमें सन् 1948 ई0 में लखनऊ में हुए हिन्दुस्तानी सम्मेलन में मिला।'' डॉ0 सम्पूर्णानन्द का तर्क था किः ''इस बात को मान लेने पर भी कि हिन्दी और उर्दू का एक ही आकार है जिसको हम क्षण भर के लिए हिन्दुस्तानी पुकार लेते है, यह निर्विवाद सत्य है कि हिन्दुस्तानी हमारी राष्ट्रभाषा के उद्देश्यों की पूर्ति में सर्वथा असमर्थ है। इसके पास फाइनैंस, रेवेन्यू, इकोनामिक, इण्टरनेशनल, डेमोक्रेसी, कास्टिट्यूशन जैसे उपयोगी शब्दों के लिए अपने स्वतन्त्र पर्याय नहीं है।''[4]

बनारस में हुए सत्तम प्रान्तीय हिन्दी सम्मेलन में स्वागताध्यक्ष के पद से भाषण करते हुए डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने कहाः ''राजाश्रय न होते हुए भी हिन्दी पनपी है, आगे

भी अपने गुणों के बल पर उन्नति करेगी। मैं जानता हूँ कि कुछ लोगों को 'हिन्दुस्तानी' ने बात–व्याधि की भाँति ग्रस लिया है। उनमें गाँधी जी जैसी दूरदर्शिता नहीं है, संवेदना नहीं है, तितिक्षा नहीं है, तपस्या नहीं है, सत्यनिष्ठा नहीं है, किसी भी अंश में महत्ता नहीं है। वह गाँधी जी के बतलाये पथ पर अन्य बातों से दूर तक चलने में असमर्थ है। परन्तु हिन्दुस्तानी शब्द को उन्होंने पकड़ लिया है।'' हिन्दी के पक्ष को तर्कपूर्ण रूप में प्रस्तुत करते हुए डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने कहा ''भारत के जिस भू–खण्ड में हम रहते हैं वह किसी के साथ अन्याय नहीं करना चाहता। यहाँ के अधिकतर निवासी हिन्दू हैं, परन्तु वे मुसलमानों की संस्कृति पर आघात नहीं करना चाहते।'' डॉ0 सम्पूर्णानन्द के अनुसार भारतवर्ष में मुसलमानों का धर्म सुरक्षित है और न ही उनसे कोई कहता है कि ''वह धर्मकृत्यों में अरबी को छोड़ दें।'' यदि वे समझते है कि ''उनकी कोई पृथक संस्कृति है और उस संस्कृति को व्यक्त करने का माध्यम उर्दू है तो वह सुख से उर्दू पढ़े–पढ़ायें।'' परन्तु ''14 प्रतिशत की भाषा को 86 प्रतिशत की भाषा'' के समकक्ष रखना कहाँ तक न्यायोचित है। उर्दू के समर्थक द्वारा अपने पक्ष में स्विट्जरलैण्ड के उदाहरण का प्रतिवाद करते हुए डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने कहाः स्विट्जरलैण्ड का उदाहरण यहाँ उचित नहीं बैठता। न तो यहाँ का इतिहास वैसा है, न समुदायों में वैसा अनुपात है, न हिन्दू–मुसलमान, फ्रेंच, जर्मन, इटालियन की भाँति भिन्न जातीय है। एक ही पिता की सन्तान हिन्दू, और मुसलमान दोनों हो सकती है। मनुष्य अपने जीवन में ही हिन्दू से मुसलमान और मुसलमान से हिन्दू हो सकता है। यह बात स्विट्जरलैण्ड में नहीं होती। वहाँ धर्म–परिवर्तन तो हो सकता है परन्तु किसी के लिए अपने जर्मन या फ्रेंच या इटालियन होने से पिंड छुड़ाना उतना सरल नहीं है।'' डॉ0 सम्पूर्णानन्द की दृष्टि में ''हमारे यहाँ उर्दू, हिन्दी के समक्ष नहीं हो सकती।'' जब अविच्छन्न भारत में भी वह हिन्दी के बराबर नहीं हो सकती थी तो पाकिस्तान बनने के बाद उसका अनुपात प्राप्त पद और भी गिर गया। उनके अनुसार उत्तर प्रदेश में ''तो बराबरी का प्रश्न ही नहीं उठता।''[5] प्रायः इस बात पर बड़ा जोर दिया जाता है कि अनेक हिन्दुओं ने उर्दू में रचना की है, और कुछ हिन्दू उर्दू शैली के पक्षपाती है। डॉ0 सम्पूर्णानन्द इस स्तर पर साम्प्रदायिक रूप से विचार करने के पक्ष में न थे। उन्होंने कहा कि ''यह तो स्पष्ट है कि जिस समय उर्दू राजभाषा थी उन दिनों नगरों में रहने वाले कुछ लोगों को उर्दू लिखने–बोलने में सुविधा होती और हिन्दू हो या मुसलमान, लेखकों को भी उर्दू लिखने से प्रचार और पुरस्कार की अधिक आशा रहती होगी।'' डॉ0 सम्पूर्णानन्द का तर्क था कि कुछ हिन्दुओं द्वारा उर्दू में ग्रन्थ लिखना इतना आश्चर्य की बात नहीं है जितना कि ''कबीर, जायसी, रहीम और रसखान द्वारा हिन्दी को अपनी भावाभिव्यक्ति का माध्यम चुनना।'' डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने ''हिन्दुस्तानी'' को खिचड़ी भाषा की संज्ञा दी जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों को बिना बिगाड़े स्वीकार नहीं किया जाता। उसमें 'देश' का 'देस', 'प्रसाद', का 'परसाद', 'साम्राज्य' को 'सामराज' के रूप में ग्रहण किया जाता है। ''किन्तु अरबी और फारसी से आये हुए शब्दों को स्पर्श भी नहीं किया जाता भले ही फे, गैन, काफ़ पूर्णतः जनता द्वारा न बोले जाते हों।''[6]

पं0 जवाहरलाल नेहरू के कथन, कि भाषा के सम्बन्ध में अल्पसंख्यकों को दबाना उचित नहीं, उनको उद्धत करते हुए डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने कहा कि ''हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानने में अल्पसंख्यकों को दबाने का प्रश्न ही नहीं उठता।'' हाँ ''हिन्दी को अस्वीकार करना बहुसंख्यकों को दबाने के समान है।'' उन्होंने स्पष्ट कहा कि ''हिन्दी के समर्थक सभी राजनीतिक समुदाय में है। यदि नेतागण हिन्दुस्तानी के पक्ष में पार्टी का चाबुक चलवा कर मत–संग्रह करेंगे तो देश का अहित होगा और पार्टियाँ भी दुर्बल हो जायेंगी।'' डॉ0 सम्पूर्णानन्द के विचार में हिन्दी हमारी ही संस्कृति, भावनाओं, आकांक्षाओं एवं आदर्शों का प्रतीक है, ''उसी के द्वारा हमारे उज्जवल अतीत् और उज्जवलतर अनागत के समन्वय की यथार्थ अभिव्यक्ति हो सकती है।'' उन्होंने स्पष्ट कहा कि हिन्दी को मात्र साधारण व्यवहार काव्य और दर्शन के लिए ही प्रयोग नहीं करना है वरन् उसको विज्ञान, अर्थशास्त्र, गणित जैसे शास्त्रों के अध्ययन अध्यापन का भी माध्यम बनना है। प्रत्येक जीवित–भाषा के समान हिन्दी ने बहुत से विदेशी शब्दों को अपना लिया है और भविष्य में अपनाती रहेगी। ''इसमें कुछ तो अपने विदेशी रूप में रह गये हैं और कुछ हमारी उच्चारण–प्रकृति के अनुसार बदल गये हैं।'' [7] डॉ0 सम्पूर्णानन्द इनको हिन्दी के व्याकरण के नियमों से अनुशासित करना चाहते थे। उनका कहना था कि ''हमारी इच्छा आवश्यक और उचित नवागन्तुक शब्दों को रोकने की नहीं है।'' हो सकता है कि संस्कृत बहुलता से कहीं–कहीं कृत्रिमता आ गई हो जिससे घबराने की आवश्यकता नहीं है।

हिन्दी भाषा के स्वरूप पर डॉ0 सम्पूर्णानन्द का मत था कि बहुत से कामों के लिए तो साधारण बोली से काम चल जायेगा, परन्तु गम्भीर विषयों के पठन–पाठन, सरकारी कार्य व अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार के लिए हिन्दी के पास पर्याप्त शब्द नहीं है। यदि उसे बाहर से शब्द लेने है तो ''हम संस्कृत के सिवाय और कहाँ से शब्द ले सकते हैं?'' डॉ0 सम्पूर्णान्नद के अनुसार संस्कृत न केवल बांगला, गुजराती, मराठी, तमिल, तेलगू, मलयालम के लिए आकर भाषा है, वरन् आज उसके आधार पर श्रीलंका और सुमात्रा तक अपने यहाँ शब्द–सृष्टि कर रहे हैं। उनका मत था कि यह संस्कृतमयी भाषा निश्चय ही कुछ कठिन होगी परन्तु इसका उपयोग भी तो विशेष स्थलों पर ही होगा। साथ ही धीरे–धीरे सुबोध भी हो जायेगी।'' अंग्रेजी में लिखी दर्शन और विज्ञान की पुस्तकें बहुत से सुपठित अंग्रेजी के लिए भी दुर्बोध होती है। यह समस्या सभी भाषाओं में है। डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने हिन्दी समर्थकों को अतिक्लिष्ट हिन्दी के विरूद्ध सावधान किया। उनका कहना था कि ''भाषा को हठात् दुरूह बनाना उसको कृत्रिम बनाना है।'' हमको लोकवाणी, जनता की

बोली, गाँव बाजार की कहावतों और मुहावरों को अपनाना चाहिए। ''उसमें जनता की अनुभूतियाँ भरी पड़ी है। उससे भाषा को शक्ति और स्फूर्ति मिलेगी।'' डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने स्पष्ट किया कि यद्यपि हिन्दी का संस्कृत से बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है, परन्तु वह स्वतन्त्र भाषा है। वह संस्कृत के शब्दों को तत्सम रूप में भले ही ले लें परन्तु उन शब्दों का अपने व्याकरण का ही जामा पहनाती है। ''उसके वांड्मय में ऐसी कृतियाँ हैं जो विश्व–साहित्य में उच्चतम कोटि में गिनी जाती है। वह भारत की राष्ट्र भाषा मानी जाने के सर्वथा योग्य है।''[8]

शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर हिन्दी का स्थानः हिन्दी भाषा के अनेकों समर्थकों ने हिन्दी को शिक्षा के विभिन्न स्तरों में संयम के साथ लागू करने पर बल दिया। माध्यमिक शिक्षा की पुनर्व्यवस्था योजना पर अपने विचार प्रकट करते हुए डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने कहा कि शिक्षा का माध्यम हिन्दी हो जाने से कम समय में ही विद्यार्थी अंग्रेजी की अपेक्षा अधिक ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। साथ ही अंग्रेजी शिक्षा भी इतने ऊँचे स्तर की देते रहेंगे कि विश्वविद्यालय स्तर पर किसी को असुविधा न हो। डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने स्वीकार किया कि विश्वविद्यालय स्तर पर अंग्रेजी माध्यम के परिणामस्वरूप विद्यार्थियों की कठिनाईयाँ घटने के बजाय बढ़ जाती है। अतः उन्होंने कहाः ''हम आशा करते है कि भाषा के प्रश्न पर हमारे विश्वविद्यालय गम्भीरतापूर्वक विचार करेंगे न कि अंग्रेजी के बदले हमारी अपनी भाषा के स्थानापन्न करने के प्रश्न पर, ऐसा रूख अख्तियार करेंगे मानो कि वह दूर का स्वप्न हो, जिसको साकार करने में सहायता पहुँचाना किसी भी व्यक्ति विशेष की कर्त्तव्य–श्रेणी में नहीं आता।''[9]

डॉ0 सम्पूर्णानन्द का तर्क था कि हिन्दी को राष्ट्र–भाषा के रूप में मान्यता दिलाने के लिए आन्दोलन का श्रीगणेश करने वाले चार हिन्दी भाषी थे। वे थे– आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती, बंकिमचन्द्र चटर्जी, लोकमान्य तिलक तथा महात्मा गाँधी। इन महान् नेताओं में से दो गुजराती, एक बंगाली व एक मराठी थे। इसी प्रकार समस्त भारतीय भाषाओं के लिए एक सामान्य लिपि के रूप में देवनागरी को स्वीकार करने का तर्क एवं आग्रह कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्री शारदाचरण ने प्रस्तुत किया जो स्वयं बंगाली थे। डॉ0 सम्पूर्णानन्द का स्पष्ट मत था कि अंग्रेजी हिन्दी का स्थान नहीं ले सकती। उन्होंने कहाः ''कल्पना ही उपहासनीय है कि कभी हिन्दी का स्थान अंग्रेजी ले सकती है। अंग्रेजी अभी तक प्रशासन की भाषा रही है और राजनीतिक नीतियाँ कुछ और समय तक इसको आगे चालू रखें, किन्तु यह किसी भी भारतीय की बौद्धिक एवं आत्मिक आस्था का अविभाज्य अंग नहीं बन सकती। जनता के आन्तरिक जीवन में इसका कोई स्थान नहीं है। यह सोचना भी समान रूप से निरर्थक है कि हिन्दी के अतिरिक्त अन्य कोई भारतीय भाषा इस कार्य को सम्पन्न कर सकती है।''[10]

डॉ0 सम्पूर्णानन्द के अलावा अन्य विचारक जैसे आचार्य नरेन्द्रदेव, डॉ0 लोहिया, मधु लिमये, एन0जी0 गोरे, एस0एम0 जोशी, राजाराम शास्त्री आदि हिन्दी के साथ–साथ क्षेत्रीय भाषाओं के प्रगति के समर्थक रहे। वे चाहते थे कि इण्टर तक क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा दी जाये। हिन्दी को राष्ट्रीय सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकार किया जाये। उनका तर्क था यदि एक भारतीय विद्यार्थी यूरोपीय देशों की भाषा में निपुणता प्राप्त कर सकता है तो एक राज्य का भारतीय विद्यार्थी हिन्दी जैसी सम्पर्क भाषा को क्यों नहीं सुगमता से समझ सकता। बाबू गुलाबराय ने कहा है, "पारिभाषिक शब्दावली का सारे देश के लिए प्रमाणीकरण आवश्यक हो, क्योंकि जब तक हमारी शब्दावली सारे देश में न समझी जायेगी, तब तक न तो वैज्ञानिक क्षेत्रों में सहकारिता ही सम्भव हो सकेगी और न विद्यार्थी ही इसका लाभ उठा सकेंगे।"[11]

निष्कर्ष

यह सत्य है कि डॉ0 सम्पूर्णानन्द जैसे समर्थकों के कारण ही हिन्दी भाषा का आस्तित्व बचा हुआ है, वरना विदेशी भाषा कब का इसे कुचलकर आगे निकल गयी होती, परन्तु वर्तमान में ऐसा ही कुछ प्रतीत हो रहा है, विदेशी भाषा लगातार हमारी भाषा पर प्रहार कर रही है, ऐसे में हम सभी का परम कर्तव्य है कि उसके प्रति सचेत होकर उसको बचाये रखने का भरसक प्रयास करे। हम सभी को अपनी हिन्दी भाषा के आपसी मतभेद भुलाकर उसके प्रति उदार दृष्टिकोण अपनाना ही पड़ेगा क्योंकि यही भाषा समस्त भारत देश को एक सूत्र में बाँधकर रख सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. तिवारी, डॉ0 भोलानाथः भाषा विज्ञानः किताब महल, इलाहाबाद, 2003, पृ 1–2
2. दीक्षित, जगदीश चन्द्रः डॉ0 सम्पूर्णानन्दः गोल्ड लाइन प्रिन्टर्स, लखनऊ, 1988, पृ0 6
3. सम्पूर्णानन्द डॉ0: थॉट्स ऑन एजूकेशन एण्ड सम एलाइड प्रॉबलम्सः सूचना एवं जानकारी विभाग, उ0प्र0 लखनऊ, 1991, पृ0 7
4. सम्पूर्णानन्द डॉ0: समिधाः सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ0प्र0, लखनऊ, 1989, पृ0 57–60
5. सम्पूर्णानन्द डॉ0: समिधाः सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ0प्र0, लखनऊ, 1989, पृ0 76–77
6. सम्पूर्णानन्द डॉ0: समिधाः सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ0प्र0, लखनऊ, 1989, पृ0 57–61
7. सम्पूर्णानन्द डॉ0: समिधाः सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ0प्र0, लखनऊ, 1989, पृ0 59–78
8. सम्पूर्णानन्द डॉ0: समिधाः सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ0प्र0, लखनऊ, 1989, पृ0 40–78
9. सम्पूर्णानन्द डॉ0: समिधाः सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ0प्र0, लखनऊ, 1989, पृ0 301–315
10. सम्पूर्णानन्द डॉ0: अधूरी क्रान्तिः लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 2002: पृ0 125–26
11. गौड़, डॉ0 आर0एन0: राजहंस हिन्दी निबन्धः राजहंस प्रकाशन मन्दिर, मेरठ, 2004, पृ0 37।